'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार–मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ८ | वाराणसी, शनिवार, १७ जनवरी, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

पालनपुर (साबरकाँठा) ३१-१२-'५८

सामाजिक रूप देने पर पारमार्थिक साधना भी सरल

साढ़े सात वर्ष पूर्व जब यह यात्रा शुरू हुई तो यही कल्पना की गयी कि १९५७ के अन्त तक एक मंजिल तय होगी। इस बीच भूदान की हवा सर्वत्र फैल जायगी और हमारे देश तथा करीब-करीब एशिया-खण्ड के एक बहुत बड़े सवाल के बारे में लोग विचार करने लगेंगे। १९५७ के अन्त तक हमारी यात्रा इसी दिशा में चलती रही। उसके फलस्वरूप सारे भारत में एक विचार-जागृति हुई और लोगों में एक शब्द चल पड़ा–'भूदान-यज्ञ'। उसमें करीब ४० लाख एकड़ से कुछ अधिक जमीन मिली और उसमें से ७-८ लाख एकड़ वितरित भी हुई।

ग्रामदान भूदान का ही अंग

उसमें से एक नया तत्त्व ग्रामदान मिला। अर्थात् गाँववाले अपने पैरों पर खड़े रहें। इसके लिए वे भूमिहीनों को थोड़ी-सी जमीन दें, यह तो कार्य का आरंभ ही कहा जायगा। वास्तव में उत्पादन का प्रमुख साधन गाँव की सारी जमीन व्यक्तिगत न रहनी चाहिए। वह गाँव की ही हो जाय और १०-१० वर्षों से जैसे-जैसे परिस्थिति बदले, तदनुसार पुनर्वितरण किया जाय। और इस तरह ग्राम-स्वराज्य की नींव डाली जाय—यह कल्पना उस भूदान-यज्ञ से निकली। वह भी भूदान का एक अंग ही था। कार्यकर्ताओं ने इस दिशा में लोगों को समझाना शुरू किया। यह सब सत्तावन के अन्दर-अन्दर तक चला।

अब नया कदम उठाना आवश्यक

उसके बाद विचार का अवसर आया कि अब हमें अपने काम में नया कदम उठाना चाहिए, जिससे यह काम सारी जनता उठा ले। आवाज तो लगभग सर्वत्र पहुँच चुकी थी और विचार के प्रति भी लोगों में अनुकूलता पैदा हो गयी थी। गाँव-गाँव पहुँचकर घर-घर बात सुनायी गयी, प्रेमपूर्वक उन्हें विचार समझाकर उनसे काम करने के लिए कहा। इसके लिए कौन-सा कदम उठाना चाहिए, इसपर विचार चल पड़ा। विचार करते-करते सूझ पड़ा कि हर घर से इस काम के लिए सम्मति मिलनी चाहिए। यह तो समाज-रचना बदलने का काम है। यदि यह पुरानी समाज-रचना कायम रखकर लोगों को राहत लेने का जैसा काम होता, जैसा कि डॉक्टर द्वारा रोगी की सेवा करना, तो भले ही लोगों की सम्मति न ली जाती। किन्तु यह काम तो समाज-रचना बदलने का काम है। आज सर्वत्र व्यक्तिगत मालकियत का भूत सवार है। उसे भगाकर भूदान से आगे बढ़ाना होगा और गाँव की जमीन गाँव की बनाने के लिए लोगों को तैयार करना होगा एवं इस तरह ग्राम-स्वराज्य की नींव डालनी होगी।

ग्रामदान कानून में जो लिखा है, उससे विपरीत नहीं, बल्कि उससे बहुत आगे की बात है। उसे कानून से विरुद्ध नहीं कहा जा सकता। कानून से आगे बढ़ने पर वह किसी तरह बाधक नहीं हो सकता। उससे पीछे हटने में ही वह विरोध कर सकता है। यह काम तो कानून से आगे जाने का है। जो कुछ हो, नयी समाज-रचना बनाने के विचार के लिए लोक-सम्मति आवश्यक हो गयी, इसलिए सम्मति-दान का नया विचार सूझा। इस तरह सत्तावन की मर्यादा पूरी होते-न-होते नया रास्ता मिल गया।

समाज का पूर्ण परिवर्तन ही लक्ष्य हो

अब हमें समाज का पूरा परिवर्तन सारे समाज द्वारा करवाना है। इसके लिए सेवकों की एक सेना खड़ी करनी चाहिए और उसका आधार लोक-सम्मति या जन-सम्मति होनी चाहिए। अब तक जो सेवक काम करते थे, उनमें से बहुत ही कम लोग जनाधारित थे। शेष कुछ तो किसी निधि के या मित्रों या घरवालों के आधार पर काम करते थे। अतः जनाधारित कार्यकर्ताओं की सेना खड़ी होनी चाहिए और उसके लिए घर-घर से आधार मिलना चाहिए।

इस वर्ष में घर-घर सर्वोदय-पात्र और शांति-सेना

यह जो नया विचार सूझा, उसे आज एक साल पूरा हो रहा है। कल से नया वर्ष शुरू होगा, याने ५८ समाप्त होकर ५९ चलेगा। अतः हमें सोचना होगा कि गत एक वर्ष से हम लोग यह विचार लोगों में फैला रहे हैं, फिर भी पहले वर्ष में भूदान जितना आगे बढ़ा, उतना यह सर्वोदय-पात्र और शान्ति-सेना का

काम आगे क्यों नहीं बढ़ पाया ? मैं समझता हूँ कि इसका कारण इस विचार का नया होना है। लोगों को लगने लगा कि यह एक नया विचार निकल पड़ा और भूदान, ग्रामदान पीछे पड़ गया। इस तरह हम एक-एक काम छोड़ते जायँ और नया-नया उठाते जायँ तो सभी काम अधूरे रह जायँगे। अतएव भूदान और ग्रामदान के कार्यकर्ताओं का लोगों को यह समझाने में ही अधिक समय लग गया कि भूदान और ग्रामदान का विचार फैलाने के लिए ही सेना की जरूरत है और सेना खड़ी करने के लिए लोगों की सक्रिय सम्मति की (सर्वोदय-पात्र की) जरूरत है। आप देखेंगे कि आनेवाले सन् १९५९ वर्ष में यह नया कार्यक्रम भारतव्यापी हो जायगा। आप अपनी डायरी में यह लिख लें कि नये वर्ष में भारत में हर जगह सर्वोदय-पात्र और शान्ति-सेना होकर रहेगी।

अपनी योग्यता का विचार भारत की विशेषता

आज कई बहनें मेरे पास आयी थीं। उन्होंने मुझसे कहा कि यह सर्वोदय-पात्र और शान्ति-सेना क्या है, इसे हमें समझाइये। जब खुद घर में ही शान्ति नहीं तो सर्वोदय-पात्र रखने की हमें योग्यता ही कहाँ है ? बाबा ने हम लोगों से कहा है कि आप लोग अपने बच्चों को सर्वोदय-पात्र में अनाज डालने के लिए कहें। फिर यदि वह न डाले और हम उसे एक तमाचा जड़ दें, तो यह काम किस तरह हो सकता है ? जहाँ हममें ही अशान्ति हो, वहाँ सारे राष्ट्र में और विश्व में शान्ति कैसे हो सकती है ? सर्वोदय-पात्र में प्रेमपूर्वक अनाज छोड़ने की हममें योग्यता ही कहाँ है ?

इस बहन ने बहुत ही अच्छा प्रश्न पूछा। ऐसा प्रश्न खड़ा होता है, यह हिन्दुस्तान का अहोभाग्य है। हिंदुस्तान में लोग कोई काम करने से पूर्व अन्तर्मुख हुआ करते हैं। यही हिन्दुस्तान की विशेषता है। ऐसा विचार हिंदुस्तान में ही हो सकता है। कई लोग पूछते हैं कि हिन्दुस्तान में जितनी जमीन मिली है, क्या वह सारी हृदय-परिवर्तन से ही मिली है ? मैं उनसे कहता हूँ कि सारी जमीन हृदय-परिवर्तन से ही क्यों प्राप्त की जाय ? हृदय बिगड़ा ही कहाँ था, जो उसके परिवर्तन की जरूरत पड़ती। दान की बात पहले से ही लोकमान्य थी। लेकिन लोग समझते हैं कि दान दें और उसकी घोषणा करें तो वह दंभ होगा। मुझसे कई लोग ऐसे ही प्रश्न करते। मैं उन्हें समझाता : "मैंने यह जो काम चलाया, वह आपको दांभिक बनाने के लिए नहीं। नाम की घोषणा का फल यही है कि उससे दूसरे लोगों की भी प्रेरणा मिलती है।" सारांश, हिंदुस्तान के लोग छोटा-सा भी स्थूल कार्य करते हैं तो उनके सामने यह प्रश्न खड़ा हो जाता है कि हम इसके योग्य हैं या नहीं। अर्थात् पहले वे अन्तर्मुख होकर उस काम के लिए अपनी योग्यता का विचार करते हैं, यह हिन्दुस्तान का बहुत बड़ा भाग्य है। इसी दृष्टि से इस बहन ने यह प्रश्न पूछा।

पहले कौन : अनासक्ति या कर्मयोग ?

हमारे कितने ही सेवक पूछते हैं कि कर्म करके आसक्त हों, इसके बदले पहले हम अनासक्त हो जायँ और फिर कर्म करें तो कैसा हो ? अर्थात् एकान्त में ध्यान, साधना आदि कर अनासक्ति प्राप्त करें और फिर समाज-सेवा का काम करें तो अच्छा होगा। इस तरह उनके मन में विचारों का मन्थन चला करता है। ऐसी बातें दूसरे देश के सेवकों के मन में उठ नहीं सकतीं। हमारे यहाँ हर प्रश्न का आध्यात्मिक परीक्षण किया जाता है। आश्चर्य की बात बताऊँ ! गुजरात में विशेष रूप में व्यावसायिक बुद्धि मानी जाती है। इस दृष्टि से यहाँ आध्यात्मिक प्रश्न कम पूछे जाने चाहिए। किंतु यहाँके युवक और बच्चे मुझसे जो सवाल करते हैं या जो कर चुके हैं, उनमें पचास प्रतिशत से अधिक आध्यात्मिक ही प्रश्न थे। यह हमारे देश की खूबी है। अतः इसका भी उत्तर ठीक मिलना चाहिए कि आध्यात्मिक योग्यता प्राप्त करने के बाद साधनों का उपयोग किया जाय या साधनों से ही वह योग्यता पायी जाय ?

विचारों की सफाई आवश्यक

इस प्रश्न का उत्तर एक दूसरी बहन ने दिया कि हम लोग इसी तरह संकल्प कर बच्चों से कहें और रोज इसपर विचार करें तो धीरे-धीरे हम लायक हो जायँगी। इन लोगों को इस तरह उत्तर देने में बहुत समय बीत जाता है और लोग यह काम करने के लिए बहुत संकोच करते हैं। फिर भी मुझे यह बहुत अच्छा लगता है। एक बार विचारों की सफाई हो ही जानी चाहिए और उसके बाद तो लोगों को निश्चय हो ही जायगा। फिर काम में लग जायँगे। कोई भी काम मन लगाकर होना चाहिए और उसके विचारों की सफाई होनी ही चाहिए।

अर्जुन का उदाहरण

आज एक भाई मेरे साथ चल रहे थे। जवान थे। उनका भी कहना था कि जब तक मन में शंका है, तब तक आपका काम किस तरह करूँ ? इसलिए निःशंक होना चाहिए, यह बात मुझे भी जँचती है। कुरुक्षेत्र के मैदान में एक ओर अठारह अक्षौहिणी और दूसरी ओर ग्यारह अक्षौहिणी सेना खड़ी है। युद्ध की शंखध्वनि भी हो रही है। फिर अर्जुन अपने सगे-सम्बन्धि को प्रतिपक्षियों के रूप में देख शंकालु बन जाता है कि युद्ध करूँ या संन्यास ले लूँ। फिर वह भगवान् से डेढ़-दो घंटे गीता का आत्मज्ञान सुनता है। उसके सुनने के बाद उसकी शंका मिट जाती है और फिर वह युद्ध के लिए तैयार हो जाता है। यह घटना भारत में ही हो सकती है। युद्ध-क्षेत्र में विजय पाना ही मुख्य लक्ष्य हुआ करता है। एक बार चर्चिल से भी यही पूछने पर उसने कहा कि इतना भी नहीं समझते कि हम लड़ाई विजय के लिए लड़ते हैं। ऐसी स्थिति में हिंदुस्तान का वीर-शिरोमणि अर्जुन का भगवान् से यह पूछना कि 'मैं विजय प्राप्त करूँ या पराजय ?' किस बात का सूचक है ? स्पष्ट है कि यहाँके लोग कोई भी काम करने के पहले निःशंक बन जाते हैं। उस काम के औचित्य और अपनी योग्यता का विचार कर लेते हैं। यह हिंदुस्तान की खास विशेषता है। इससे किसी तरह डरना नहीं चाहिए।

आज व्यक्तिगत साधन कठिनतम

आज मनुष्य की साधना व्यक्तिगत हो सकती है, यह समझना सर्वथा गलत है। यदि हम समाज से अलग होकर चित्तशुद्धि करने का विचार करें तो चित्त में ही सारा संसार उठ खड़ा होगा। जितना ही समाज से बचने का उपाय करेंगे, उतना ही वह सिर चढ़ बैठेगा। काम, क्रोध, मद, मोह, मत्सर आदि का बहुत बड़ा समाज चित्त में खड़ा हो जाता है। इसकी अपेक्षा बाहर का जो समाज था, वही मुबारक था। इसलिए सच्ची बात तो यह है कि चित्त-शुद्धि का साधन सामाजिक हो। यदि हम समाज से बाहर जाकर चित्त-शुद्धि का यत्न करेंगे तो भीतर-ही-भीतर लड़ाई शुरू हो जायगी। फिर जीवन तो बाहर ही हुआ करता है। खाना-

पीना, व्यवसाय करना आदि बातों के लिए समाज से संबंध रखना ही पड़ता है।

चित्त एकाग्र करने की जरूरत ही नहीं

कितने ही लोग सुबह-सुबह जरा आसन लगाकर ध्यान, प्राणायाम आदि करने बैठ जाते हैं। लेकिन चित्त एकाग्र नहीं हो पाता, वह दौड़ने लगता है या नींद ही आ जाती है। फिर मुझसे आकर पूछते हैं कि "बहुत प्रयत्न किया, फिर भी चित्त एकाग्र नहीं हुआ। क्या किया जाय ?" मैं उनसे साफ कहता हूँ कि चित्त एकाग्र करने की जरूरत ही क्या है ? मेरा यह प्रहार देखकर वे घबरा जाते हैं और सोचते हैं कि अब तक हम यही सुनते आये कि चित्त एकाग्र करना चाहिए, आखिर इन सब बातों का क्या अर्थ है ? किन्तु मैं उनसे पूछता हूँ : "आप खाने के लिए बैठते हैं, गपागप लड्डू मुँह में डालते हैं तो क्या आपका चित्त एकाग्र नहीं होता ?" सच तो यह है कि उसमें न केवल छोटे बच्चे, वरन् बड़ों-बड़ों का भी चित्त एकाग्र हो जाता है। इसीलिए मैं तो यही कहता हूँ कि जो वस्तु अच्छी लगे, उसे खाने का कार्यक्रम कीजिये। आप लोगों को लगता है कि ये लोग ध्यान-समाधि में प्रवीण हैं। लेकिन यदि इन्हें भूदान, ग्रामदान जैसे सार्वजनिक काम सौंपे जायँ तो ये गर्मी, वर्षा, शीत में घूम न सकेंगे और उकता जायँगे। किन्तु मैं नहीं उकताता। कारण, मेरे हाथ में काम है और उसका उद्देश्य सामाजिक है। इसलिए मुझसे आध्यात्मिक साधना सहज ही बन पड़ती है।

पदयात्रा साधना का अद्भुत उपाय

एक भाई ने मुझसे पूछा कि "क्या इन यात्राओं से रजोगुण नहीं बढ़ता ?" मैंने उसे छूटते ही जवाब दिया : "बैठने से तमोगुण बढ़ता है, उससे तो यह अच्छा ही है।" फिर बाद में मैंने उसे बैठाकर समझाया कि पदयात्रा में यह सारी बातें बड़ी सरलता से सध जाती हैं। मुझ जैसे को तो छोड़ दो, लेकिन जिन्हें साधारणतः संयम का अभ्यास नहीं होता, उनके लिए पदयात्रा साधना का एक अद्भुत उपाय है। घर में बैठकर संयम रखने की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती। लेकिन पदयात्रा में निकलने पर यह अक्ल आ जाती है कि इस गाँव में एक ही दिन रहना है, इसलिए यहाँ हमारा दोष प्रकट न हो पाये। अतएव वह संयमपूर्वक दोष त्यागकर वहाँ गुण ही प्रकट करेगा। इस तरह रोज करते करते दोष सहज ही दब जाते हैं, वैसी आदत ही बन जाती है।

साधना को सामाजिक रूप दें

सारांश, यह समझने की बात है कि यदि हम पारमार्थिक साधन को सामाजिक रूप देते हैं तो वह बड़ा ही आसान हो जाता है। इसलिए 'पहले घर में रहकर शान्त हो जायँ और फिर शांति-सैनिक बनें और सर्वोदय-पात्र का विचार करें'—ऐसा सोचेंगे तो यही जन्म नहीं, ऐसे कितने ही जन्म बीत जायँगे, फिर भी शान्त नहीं हो सकते। किन्तु यदि इसे हम सामाजिक रूप दें और सामाजिक कार्य उठा लें तथा अन्तर में सतत शांति के लिए चिन्तन करते रहें तो यह आध्यात्मिक साधना सरल हो जायगी।

अब कितनी गीताएँ बनायेंगे ?

बहनों ने यह बड़ा ही सुन्दर सवाल किया, जिसपर मुझे लगा कि आज साल पूरा हो रहा है, इसलिए इस विषय में स्पष्टीकरण कर दूँ। वैसे सभी शंकाओं का निवारण हो जाय, तभी काम करना चाहिए। इस तरह सोचते रहें कि 'सभी शंकाओं का निवारण हो जाय, तब क्राम करेंगे' तो प्रश्न होता है कि तब तक हम जिंदा भी रहेंगे या नहीं ? फिर सभी शंकाओं का निवारण करना हो तो भगवान् कृष्ण ही मिलना चाहिए और अठारह अध्याय की गीता बननी चाहिए। एक आप यह गीता बार-बार बनाना चाहते हैं ? फिर तो वह गीता और वह अर्जुन, सारा व्यर्थ हो जायगा। इसीलिए तो मैं शंकासुर का निवारण करने के लिए गीता-प्रवचन का प्रचार किया करता हूँ।

थोड़ा ज्ञान और थोड़ी श्रद्धा लेकर आगे बढ़ें

जिन्हें ज्ञान और श्रद्धा नहीं होती, उन्हींके मन में सन्देह हुआ करता है और जिसके मन में सन्देह पैदा हो जाता है, उसका नाश हो जाता है : 'संशयात्मा विनश्यति।' इसलिए या तो ज्ञान प्राप्त करें या श्रद्धा रखें। लेकिन सारा ज्ञान तो एकदम हाथ न लग जायगा। इसलिए थोड़ा ज्ञान और थोड़ी श्रद्धा रखकर काम करते जायँ तो धीरे-धीरे ज्ञान भी बढ़ेगा और श्रद्धा भी। मेरा सारा जीवन ही आध्यात्मिक साधना में बीता है। आज भी जो चल रहा है, वह बाह्य दृष्टि से तो सार्वजनिक कार्य दीखता है, लेकिन अन्तर से तो आध्यात्मिक साधना ही चल रही है, इसका मुझे विश्वास है और यही मुझे अनुभव भी होता रहता है। ● ● ●

प्रार्थना-प्रवचन

पड़घरी (बंबई राज्य) २३-११-'५८

धरती पर स्वर्ग लाने का उपाय—ग्रामदान

हमारा देश ग्यारह वर्षों से स्वतंत्र है। इन वर्षों में काठियावाड़ में बहुत सुधार भी हुए हैं। मैंने सुना है कि यहाँ जो सुधार हुए हैं, उनसे बहुतों को सुख हुआ है तो बहुतों को दुःख भी। यह कोई नयी बात नहीं। कानून बनानेवालों के मन में दुःख देने की बात नहीं होती, फिर भी कुछ लोगों को दुःख होता है। कानून से होनेवाले नुकसानों को भी रोका जा सकता है और लाभ उठाया जा सकता है। इसकी युक्ति हमें खोजनी चाहिए। सरकार के कानूनों का लाभ मिले और हानि से हम मुक्त हो जायँ, ऐसी बात मुझे सूझ गयी है और वह है ग्रामदान। ग्रामदान से ग्रामसमाज में अपने ढंग से आगे बढ़ने की शक्ति आयेगी और प्रत्येक ग्राम एक स्वतन्त्र नमूना बन सकता है। ऐसे गाँव में जो परिस्थिति हो, उसका विचार करके कोई योजना उस ग्रामवाले चलायें। दूसरे गाँव में दूसरी परिस्थिति हो तो उस गाँववाले दूसरी योजना चलायें। प्रत्येक गाँव का समाधान उस-उस गाँव के लोग प्राप्त करें। गाँववाले यदि अपने समाज की योजना का काम अपने हाथ में ले लेंगे तो वे बच जायँगे। नहीं तो सारे गाँवों की योजना अगर दिल्लीवाले बनायेंगे तो नफा और नुकसान दोनों सहन करने होंगे। इसीलिए मैंने ग्रामदान का विचार रखा है।

ग्रामदान से कोई भय नहीं

कितने ही लोगों को ग्रामदान से भय लगता है। उन्हें लगता है कि सरकार भी जमीन लेने की बात करती है। कम्युनिस्ट भी जमीन लेने की बात करते हैं। सोशलिस्ट भी यही बात करते हैं और बाबा भी यही बात कहता है। उन्हें डर लगता है कि ये सब डाकू मिलकर हमें सताने के लिए आते हैं। मैं अपने बारे में कहना चाहता हूँ कि ग्रामदान-आन्दोलन से अधिक सुरक्षित योजना गाँवों के लिए दुनिया में दूसरी नहीं है। सरकार के कानूनों द्वारा होनेवाली हानि से बचानेवाली और सरकार के कानूनों का लाभ प्राप्त करनेवाली ग्रामदान के सिवाय दूसरी योजना हो नहीं सकती, ऐसा मेरा विश्वास है। इसलिए मैं ग्रामदान की योजना लोगों के आगे रखता हूँ। अपने गाँव में यदि अपना ही राज्य चले तो ऊपरवाले जितनी कर सकते हैं, उतनी मदद करेंगे ही। वे अपने गाँव में बाधाएँ नहीं ला सकेंगे। हमारे देश को स्वराज्य मिले ग्यारह वर्ष हो गये, परन्तु क्या अब तक गाँवों को स्वराज्य मिल सका? अगर ऐसा नहीं हुआ है, स्वराज्य का पूरा लाभ यदि गाँवों को नहीं मिला है तो इस स्वराज्य से उनकी हालत में क्या अन्तर पड़ा?

गाँव के झगड़े बाहर न जायँ

अब तक जो झगड़े होते थे, वे दिल्ली तक पहुँचते थे और दिल्ली में समाधान न होने पर लंदन में प्रीवी कौंसिल तक पहुँचते थे। परन्तु स्वराज्य मिलने के बाद वे दिल्ली जाकर अटक जाते हैं। वे लंदन तक नहीं जाते। राष्ट्र को स्वराज्य मिला, इसका अर्थ यह है कि राष्ट्र का झगड़ा राष्ट्र के बाहर न जाय, यह एक बहुत बड़ा लाभ है। परन्तु गाँव का झगड़ा अगर गाँव के बाहर जाता है तो यह नहीं माना जायगा कि गाँव को ग्राम-स्वराज्य मिला। वह गाँव का लाभ भी नहीं कहा जायगा। गाँवों के झगड़े गाँवों के बाहर न जायँ और झगड़ों का अन्तिम निर्णय गाँववाले करें, तभी उसे ग्राम-स्वराज्य कहा जायगा। अन्दर-अन्दर झगड़े हों और झगड़े राजकोट जायँ और राजकोट में भी समाधान न मिलने पर बंबई जायँ तो इसे ग्राम-स्वराज्य नहीं कहते। गाँवों को यदि स्वराज्य प्राप्त करना हो तो यह स्वराज्य ऊपर से कोई आदमी लाकर नहीं देगा। स्वराज्य तो अपनी कमाई है, अर्थात् उसे स्वयं अपने पुरुषार्थ से प्राप्त करना पड़ता है। अब तो अपने देश को आजादी मिल गयी है। इसका उपयोग करके गाँव में स्वराज्य स्थापित हो सकता है। किन्तु यदि हम देश के इस स्वराज्य का लाभ नहीं उठायेंगे तो बाद में क्या होगा? जो पराधीनता अंग्रेजों के राज्य में थी, वह स्वराज्य मिलने के बाद भी कायम रहे तो फिर अंग्रेजों के जाने से कोई बहुत बड़ा फर्क नहीं पड़ा, ऐसा कहना होगा।

परमेश्वर से ही अपील क्यों न करें?

टॉल्स्टॉय की एक कहानी है—एक लड़के ने देखा कि पड़ोस में कुछ लड़कियाँ बैठी रो रही हैं। जाँच करने पर मालूम हुआ कि अदालत में उनके विरुद्ध कोई फैसला हुआ है। लड़के ने उन लड़कियों के पिता से पूछा कि "क्या आप तहसील की अदालत में अपील करेंगे?" उन्होंने कहा कि "वहाँ भी अगर विरुद्ध निर्णय हुआ तो?"

"जिला-कोर्ट में जाइये"—लड़के ने कहा।

"और अगर जिला-कोर्ट में भी अनुकूल फैसला न हो तो?"

"तो मास्को जाइये।"

"और यदि मास्को की अदालत में भी अनुकूल फैसला न हो तो?"

"परमेश्वर के पास अपील करिये।"

तब उन्होंने कहा कि "यदि मुझे अन्तिम अपील परमेश्वर के पास ही करनी है तो फिर पहली ही अपील परमेश्वर के पास क्यों न करूँ?" इसका जवाब वह लड़का नहीं दे सका।

गाँव में स्वराज्य कब आयेगा?

गाँव का झगड़ा गाँव में ही समाप्त हो, यह मानकर गाँव में जो फैसला हो, उसीसे समाधान मान लिया लिया जाय तो गाँव में स्वराज्य आयेगा। गाँव की सारी जमीन गाँव-सभा की होगी। अमुक व्यक्ति मालिक, अमुक के पास कम जमीन और अमुक के पास बिलकुल नहीं, ऐसा ग्रामदान में नहीं होता। ग्रामदान में जितनी जमीन होगी, वह सब गाँव की जमीन होगी। हर व्यक्ति को आधा-आधा एकड़ जमीन दी जायगी। बाद में जितने लोगों को ग्रामोद्योग दिये जा सकते हैं, दिये जायँगे। गाँव में कोई बेकार न रहे, इसकी जवाबदारी गाँव-सभा पर होगी। अगर कोई बेकार रहता है तो उसे खिलाने की जवाबदारी भी ग्राम-सभा की होगी। जिन्हें कुछ अधिक जमीन की जरूरत होगी, उन्हें दस-दस बरस तक अधिक जमीन देने की सुविधा हो सकेगी, जैसी कि राजा-महाराजाओं के लिए की गयी है। गाँव की एक दूकान होगी, जिसके मार्फत गाँव का व्यवहार चलेगा। सारे गाँव की खरीद-बिक्री इस दूकान के मार्फत होगी। बाहर की दुनिया के साथ जो कुछ व्यवहार करना हो, वह दूकान के मार्फत ही होगा। यह दूकान सारे गाँव की होगी। किसीकी निजी दूकान नहीं होगी। गाँव की जमीन का छठा हिस्सा भूमिहीनों को दिया जाय। उससे ज्यादा भी दिया जा सके तो और अच्छा। गाँव के झगड़ों का फैसला गाँव में ही हो। इस तरह यदि ग्राम-योजना हो तो सरकार के कानून कुंठित हो जायँगे। गाँववालों के बीच गाँव का कानून चलेगा और फिर गाँव के सब लोग मिलकर जो निर्णय करेंगे, वह सारे गाँव को मान्य करना होगा।

गाँव में जो विवाह-शादियाँ होती हैं, वे क्या सरकार की अनुमति लेकर होती हैं? गाँव के लोग यदि विवाह में साक्षी देते हैं तो वह विवाह मान्य करना पड़ता है। वर-वधू और उनके माता-पिता की स्वीकृति से सब लोग विवाह कर लेते हैं तो सरकार उसके बीच पड़ भी नहीं सकती। इसी तरह यदि हम अपने न्याय आदि की व्यवस्था अपने-आप करेंगे तो सरकार बीच में नहीं पड़ेगी। गाँववाले मिलकर जो कानून बनायेंगे, वह सरकार को मानना पड़ेगा। सरकार हमसे इतना ही कहेगी कि मदद की आवश्यकता हो तो दी जा सकती है। हमें सरकारी मदद मिलेगी तो परेशानियाँ न उठानी पड़ें, इसकी युक्ति है—ग्रामदान। ग्रामदान अभयदान है। परन्तु काठियावाड़ में भय पैदा हो गया है कि ग्रामदान आयेगा तो पता नहीं क्या होगा? किंतु आप सब निर्भय रहें कि ग्रामदान ऊपर से नहीं लादा जायगा। विचार करके यदि ग्रामदान करेंगे तो इसमें आपका ही राज्य होगा और आपकी ही कठिनाइयाँ दूर होंगी। फिर भी ग्रामदान की कल्पना से आप सबको भय लगता हो तो ऐसे ग्रामदान की मुझे कतई जरूरत नहीं है। आप विश्वास रखिये कि ग्रामदान से आपका कोई नुकसान नहीं होनेवाला है। ग्रामदान से तो ग्रामराज्य होनेवाला है और इस ग्रामराज्य से गाँव में रामराज्य स्थापित हो सकता है।

रामराज्य अन्तिम कदम

ग्रामराज्य पहला कदम है और रामराज्य अन्तिम। ग्रामराज्य में गाँव के झगड़े गाँव में ही समाप्त हो जायँगे और रामराज्य में गाँव में झगड़े होंगे ही नहीं। इसीके लिए मैंने एक बार कहा था कि ग्रामराज्य–गरामराज्य। 'ग' यानी गर्व। पहले ग्रामराज्य कहिये और बाद में उसमें गर्व का जो 'ग' है, उसे हटा दें। क्योंकि गर्व का 'ग' बहुत गड़बड़ करता है। फिर रामराज्य हो जाता है। यह समझने की बात है।

ग्रामराज्य रामराज्य की साधना है। रामराज्य का मतलब यह नहीं है कि राम नाम का कोई राजा होगा और वह दशरथ का पुत्र होगा। राम नाम तो प्रत्येक के हृदय में है। जो नाम हृदय में रममाण हो गया है, जो नाम हृदय में रमता है–वह राम है।

राम तो प्रत्येक गाँव के प्रत्येक हृदय में रमे हुए हैं। परन्तु आज वे सोये हुए हैं, अप्रकट हैं। जब राम जागेंगे, प्रकट होंगे, तब रामराज्य होगा। एक बार रामराज्य आने के बाद वह स्थायी हो जाता है। रामराज्य ऐसा नहीं होता कि आया और गया। जो जाने के लिए आता है, उसका नाम रामराज्य नहीं है। वह स्थिर होने के लिए ही आता है। जो जाने के लिए आते हैं, वे और तरह के राज्य होते हैं। अब एक आदमी की दूसरे पर सत्ता और शासन नहीं रहनेवाला है। केवल प्रेम, करुणा और सहकार ही रहेगा।

विचार अमल में लाइये

मेरी ये बातें सुनकर अनेक लोग पूछते हैं कि आपकी ये सारी बातें कभी सही होनेवाली हैं? मेरा कहना है कि आप करेंगे, तब न होगा? किये बिना तो कुछ होगा नहीं। यह कोई पंचांग में लिखी हुई ज्योतिष-शास्त्र की बातें नहीं हैं कि अमुक दिन शुक्र और गुरु एक जगह होंगे, अतः अमुक काम होगा या नहीं। ये तो करने की बातें हैं। जब करेंगे, तब होगा और जितना समय आप लगायेंगे, उतनी देर लगेगी। आप कल करेंगे तो कल होगा। हम ग्राम-स्वराज्य की स्थापना आज आधी रात को भी कर सकते हैं। विचार समझने में जितना समय लगेगा, उतना तो समय लगेगा ही; किन्तु विचार समझने के बाद देर नहीं लगेगी। मेरे बिछौने पर साँप है, यह मालूम होने पर क्या मैं उसपर सोया रह सकता हूँ? तत्काल बिछौना छोड़कर अलग हट जाऊँगा। वह बिछौना कितना ही मुलायम हो, तब भी मुझे उसका मोह नहीं लगेगा। इस तरह यदि ध्यान में आये कि मालिकी हक घातक है और वह गाँव के हृदय को चीरता है और गाँव के टुकड़े करता है तो इस दर्शन के साथ ही उसका अमल भी होगा। जब तक दर्शन नहीं होगा, तब तक विचार करते रहेंगे और जब तक विचार समझ में नहीं आयेंगे, तब तक अमल में नहीं आयेंगे। परन्तु एक बार विचार समझ में आने के बाद मेरे पास कहने के लिए कुछ नहीं रह जायगा।

हर घर में माँ मिलेगी

बड़े-बड़े लोग मेरी ये बातें शान्ति से सुनते हैं। ये बातें अमल में नहीं लायी गयीं तो गाँव के लड़के चर्चा करेंगे कि बाबा के विचारों का अमल कब होगा? अगर उन्हें मालूम हो जाय कि इन विचारों का अमल बड़े लोग कल से ही करनेवाले हैं तो ये सारे लड़के प्रसन्नता से नाचने लगेंगे। क्योंकि ग्रामदान में तो गाँव के सारे लड़के एक ही परिवार के माने जायँगे। आज तो किसी भी माँ से पूछिये कि तुम्हारे बेटे कितने हैं? तो वह कहती है, दो, तीन या चार हैं। परन्तु ग्रामदान के बाद तो प्रत्येक माँ यही कहेगी कि गाँव के सारे लड़के मेरे लड़के हैं। आज तो गाँव में हर लड़के की एक ही माँ होती है। परन्तु ग्रामदान के बाद गाँव की सारी माताएँ उसकी माँ कहलायेंगी। उसे भूख लगेगी तो वह किसी भी घर में पहुँचकर कहेगा कि माँ, मुझे भूख लगी है और वह उस लड़के को भोजन देगी। इसी तरह किसी भी घर की माँ जरूरत पड़ने पर किसी भी लड़के को बुलाकर कह सकेगी कि अरे बेटे! चलो, घर में लड़का बीमार है, इसलिए अमुक काम कर दो। वह लड़का तत्परता से उसका काम करने के लिए तैयार हो जायगा। बहुत लोगों को यह बात बहुत अच्छी लगती है, लेकिन यह होगी कैसे? मैं कहता हूँ कि भाई, यह बात कैसे नहीं हो सकती? जब आप करने का निश्चय करेंगे तो क्या नहीं होगा? आपको रोकनेवाला कौन है? मान लीजिये, आप झगड़ा नहीं करते तो क्या आपको कोई पकड़ने आयेगा? आपको अगर यह बात अच्छी लगती है, मीठी लगती है तो करते क्यों नहीं?

हम कैसा स्वर्ग चाहिए?

कम्युनिस्ट कहते हैं कि हममें से कुछ लोगों को मार डालने से स्वर्ग स्थापित हो सकता है। पौराणिक कहते हैं कि मरने के बाद स्वर्ग जा सकते हैं। पर ऐसा स्वर्ग हमें नहीं चाहिए। हमें तो ऐसा स्वर्ग चाहिए, जिसमें किसीको न मरना पड़े, न मारना ही पड़े। वह यहीं, इसी भव में, इसी जन्म में और इसी देह में मिल सकता है।

एक भाई कहते थे कि स्वर्ग में जाने से पालकी में बैठने को मिलता है। वहाँ कितना आनंद होता है? मैंने कहा कि जहाँ कई लोग पालकी उठानेवाले हों, कई लोग पालकी में बैठनेवाले हों, ऐसा जहाँ ऊँच-नीचपन है और जहाँ इन्द्राधिपति है, उपेन्द्र है, राजागण है, अधिराजा है, ऐसा स्वर्ग किसी काम का नहीं है। हमें तो इस दुनिया का स्वर्ग चाहिए, जहाँ समान अधिकार हो और समान प्रेम हो। न कोई ऊँच हो, न नीच। सब भाई-भाई हों। ऐसा स्वर्ग स्वयं मरे बिना और किसीको मारे बिना लाना जरूरी है। उसका उपाय है ग्रामदान!

प्रार्थना-प्रवचन

हड़मतिया (सौराष्ट्र) २४-११-'५८

ग्रामराज्य में ही स्वराज्य की सफलता निहित है

स्वराज्य तो मिल गया है, फिर भी कहना पड़ता है कि 'स्वराज्य प्राप्त हुआ' ऐसा प्रतीत नहीं होता है। किसी बीमार को भरपूर नींद नहीं आती। प्रातःकाल उठना उसके लिए मुश्किल है, सर्दी सहन नहीं होती, उत्साह नहीं आता। फिर भी यदि डॉक्टर कहे कि तुम्हारा ५००) का बिल हो गया; इसलिए अब तुम पूर्ण स्वस्थ हो तो बीमार की विचित्र अवस्था हो जाती है। यही विचित्रावस्था आज हिन्दुस्तान की है। हिन्दुस्तान से विदेशी राज्य हटा, परतन्त्रता मिटी और स्वराज्य आया, ऐसा कहा जाता है। पर वास्तव में अभी गाँव के लोगों को इसकी प्रतीति ही नहीं होती।

ये शासक आपके नौकर!

लोग कहें कि भोजन से पेट भर गया, किंतु यदि मेरा

अपना पेट खाली ही हो तो मैं कैसे कहूँ कि मेरा भोजन हो गया ? मुझे स्वयं इसकी अनुभूति हो, तभी तो मैं स्वीकार कर सकता हूँ ? आज देहातों की स्थिति ऐसी ही है। गाँववालों को स्वराज्य का अनुभव नहीं होता। वह हो भी कैसे ? अभी तो ऐसा चल रहा है कि ये सारे लोग, ये समस्त भाई-बहन हिन्दुस्तान के मालिक हैं, राज्य-कर्ता हैं। इन्होंने शासन चलाने के लिए अपने नौकरों का चुनाव किया है। इस चुनाव का, मत-दान का अर्थ क्या है ? क्या अंग्रेजों के राज्य-काल में ऐसे कहीं कोई वोट माँगने आते थे ? इसका अर्थ यही है कि आपको स्वराज्य मिला। अब राज्यकर्ता आपकी सम्मति के बिना शासन नहीं चला सकते। अतः आपकी सम्मति लेने के लिए वे आपके पास पहुँचते हैं। जिन्हें आप लोगों के अधिक मत मिलते हैं, वे ही शासन चलाने के अधिकारी निर्वाचित होते हैं। वे आप सबकी पाँच बरस तक नौकरी करेंगे। यदि इनका काम ठीक लगे तो अगले पाँच वर्षों के लिए भी आप इन्हें चुन सकते हैं। इनका काम ठीक न लगे तो हटा भी सकते हैं एवं दूसरों को चुन सकते हैं।

पंडित जवाहरलालजी से लेकर साधारण पुलिस तक सभी आपके नौकर हैं और आप मालिक हैं। इसका आपको अनुभव होता है या नहीं ?

ग्राम-स्वराज्य से ही स्वराज्य का अनुभव

यदि गाँव का राज्य गाँव में चले तो यह अनुभव हो सकता है कि 'राज्य हमारा है।' आज न तो सारा गाँव एक है और न सभी मिलकर विचार ही करते हैं। हर घरवाला अपने-अपने घर का विचार करता है। गाँव में जितने लोग हैं, वे सब सबकी चिंता करें। सबको उद्योग मिले। उत्तम आरोग्य, उत्तम शिक्षण मिले। दैनिक आवश्यकता की सारी चीजें गाँव में ही पैदा हों। गाँव में पैदा होनेवाली सभी चीजों की ठीक कीमत प्राप्त हो। गाँव में काम करनेवालों को किसी प्रकार का अभाव न रहे। किन्तु ऐसी एक भी योजना आज गाँव में नहीं है। यदि बेकारों को काम देने और बीमारों की सेवा की योजना गाँव में न हो और फिर भी हम कहें कि हमें स्वराज्य मिल गया तो इससे ग्राम-स्वराज्य थोड़े ही होनेवाला है।

ग्रामदान के बिना उत्साह नहीं

एक भाई ने सवाल किया कि भूदान की बात तो हमारी समझ में आती थी। जितना दे सकते थे, उतना दिया भी। किंतु यह ग्रामदान तो समझ में नहीं आता। अगर ग्रामदान की योजना ध्यान में आ जाय तो बहुत-से गाँववाले ग्रामदान कर देंगे और गाँववाले गाँव का कारोबार स्वयं ही चलायेंगे। अपनी मन-पसंद योजनाएँ बनायेंगे। किसीको घर की सत्ता मिल जाती है तो वह उत्साह से काम करता है। सत्ता न हो और केवल काम ही करना हो तो उत्साह नहीं रहता। इसी तरह गाँवों में यदि सबका अधिकार हो याने ग्रामदान हो जाय तो गाँव का प्रत्येक व्यक्ति अपनी बुद्धि और अपनी योजना से सोत्साह काम करता रहेगा। आज गाँवों में एक बात बहुत बुरी हो रही है कि जिस जमीन के भरोसे सबका भरण-पोषण होता है, वह कुछ लोगों के हाथ में है तो कुछ लोग उससे वंचित रह गये हैं। इससे किसीको संतोष नहीं हो सकता, बल्कि दिन पर दिन स्थिति जटिल ही होती जायगी। अतः ग्रामदान ही गाँवों का आधार है। उसी पर ग्राम-विकास की सारी इमारत खड़ी हो सकती है।

इसमें आश्चर्य ही क्या ?

आज लोग ग्राम-स्वराज्य की कल्पना नहीं कर सकते, इसमें आश्चर्य की बात नहीं है। जब हमारे देश का राज्य अंग्रेजों के हाथ में था, तब बड़े-बड़े नेता भी स्वराज्य की बात नहीं कर पाते थे। बड़े-बड़े लोग इस श्रद्धा से काम करते थे कि अंग्रेजों का राज्य तो अच्छा है, परन्तु इसमें कुछ दुःख भी है। अंग्रेजों के पास जाकर कहेंगे तो वे कोई रास्ता निकालेंगे। हमारे सबसे बड़े नेता दादाभाई नौरोजी ने भी प्रजा के दुःखों को अंग्रेजों के सामने रखा और कोशिश की थी कि कोई राहत का रास्ता निकले। उन्होंने तीस-चालीस वर्षों तक काम किया। १८६० और १८७० से उन्होंने काम शुरू किया और १८८५ में कांग्रेस की स्थापना हुई। उसके बाद भी ३०-४० वर्ष तक काम चलता रहा। इससे उन्हें यह अनुभव हुआ कि बिना स्वराज्य मिले पूरी तरह दुःख नहीं मिट सकता। तब उन्होंने १९०६ में कलकत्ते की कांग्रेस में पहली बार स्वराज्य की घोषणा की। इस तरह जब हमारे यहाँ विदेशी राज्य था, तब स्वराज्य की माँग की बात ४० वर्ष बाद सूझी। ऐसी हालत में ग्राम-स्वराज्य की बात जल्दी-जल्दी नहीं सूझती है तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ? अन्त में आप लोगों के ध्यान में आयेगा कि हमारे दुःख सरकार के सामने रखने से ही नहीं, बल्कि ग्राम-स्वराज्य की स्थापना करने से ही मिटेंगे। जब तक लोग अपने पैरों पर खड़े नहीं हो जाते, तब तक ऊपर की मदद व्यर्थ ही रहेगी, गाँव का भला नहीं होगा और गाँव का रक्षण भी नहीं होगा।

विचार जोरों से फैलेगा

स्वराज्य की बात सूझने में ४०-५० वर्ष लग गये, लेकिन यह विज्ञान-युग है, इसमें ग्राम-स्वराज्य की बात सूझते देर न लगेगी। आज हिन्दुस्तान के अनेक जिलों में ग्रामदान हो रहे हैं। १५-२० जिले तो ऐसे हैं, जहाँ १००-१२५ ग्रामदान हुए हैं। ये जिले असम, उड़ीसा, बिहार आदि प्रान्तों में हैं। रत्नागिरि और खानदेश में लगभग ५०० ग्रामदान हुए हैं। यों पाँच-दस ग्रामदान तो कई जिलों में हुए हैं, किन्तु ५० से अधिक ग्रामदान १६ जिलों में हुए हैं। इस तरह नदी का प्रवाह शुरू हो गया है। विचार के मूल में अगर सत्य हो तो उसका आरंभ छोटा-सा ही होता है। बाद में वह नदी की तरह बढ़ता है। देश को इस विचार की बहुत जरूरत है। यह सत्य पर आधारित है, इसलिए बहुत जोर से फैलेगा। जब सर्वत्र ग्रामदान की भावना फैलेगी, तब तो ऐसा लगेगा, मानो बाढ़ आ गयी। फिर कार्यकर्ता ही कम पड़ेंगे।

यह तो स्वार्थ साधने की बात

लोगों को शंका होती है कि लोग अपना स्वार्थ कैसे छोड़ेंगे ? यह स्वार्थ छोड़ने की बात नहीं है। यह तो स्वार्थ साधने का तरीका है। यह विचार गुड़ की तरह मीठा है। ऊपर-ऊपर से इस विचार का स्वाद कैसे मालूम होगा ? स्वाद जानने के लिए तो गुड़ चखना पड़ता है। जीभ पर रखने के बदले हम गुड़ को देखते रहें और कहें कि पता नहीं कैसा स्वाद है तो चल नहीं सकता। गुड़ पर पहले बच्चे आसक्त होते हैं, फिर बड़े। इसी तरह पहले छोटे गाँव ग्रामदान के लिए तैयार होते हैं, फिर बड़े गाँव ! शहरवाले तो बहुत बाद में समझते हैं। बुनियादी क्रान्ति करते हैं गाँववाले और उसका इतिहास लिखते हैं शहरवाले। शहरवाले इसका सरस इतिहास लिख सकेंगे, किन्तु जब तक गाँववाले जागेंगे नहीं, तब तक शहरवालों के ध्यान में यह बात नहीं आयेगी।

सेवकों की आवश्यकता

मैं गुजरात के बड़े शहरों की ही बात नहीं करता। हिन्दुस्तान के लगभग आधे शहर मैं घूम आया हूँ और परमेश्वर की इच्छा होगी तो और शेष आधे भी पूरे हो जायँगे। मद्रास, हैदराबाद आदि नगरों में मैंने देखा है कि विचार सुनने के बाद जनता के मन में शंकाएँ नहीं रहीं। उन्हें मेरा विचार पसन्द आता है। किन्तु शहरवालों को यह शंका अवश्य होती है कि यह काम हो कैसे? ये लोग बुद्धिमान हुआ करते हैं, इसलिए इन्हें ऐसी शंका हुआ करती है। बाबा जो बात करता है, वह ग्राम-स्वराज्य की बात करता है। गाँववालों को स्वराज्य नहीं मिला है। स्वराज्य का पार्सल दिल्ली, बम्बई में ही पड़ा है। उसे गाँव-गाँव में पहुँचाना होगा। इसके लिए उस-उस स्थान की भाषा बोलने और समझनेवाले लोग चाहिए। मुझे इसी तरह के ७५ हजार लोगों की आवश्यकता है। हमारे देश में ३७॥ करोड़ लोग हैं। इन सबको निरन्तर विचार समझाने के लिए सेवकों की नितान्त आवश्यकता है।

सरकार और जनता दोनों को लाभ

मध्य सौराष्ट्र में गांधी का घर है। लोग मुझे वहाँ ले गये थे। यहाँ १० लाख लोग रहते हैं। अतः मुझे कम-से-कम २५० शान्ति-सैनिक यहाँसे मिलने चाहिए। वे निरन्तर सेवा करनेवाले और सभी कार्यों से मुक्त हों। ऐसे स्वतन्त्र लोग खड़े हों। लोग ही उनके योग-क्षेम की चिन्ता करें। इसमें सरकारी योजना न चले। यदि हम ऐसा कर सके तो सारे हिन्दुस्तान में अद्‌भुत शक्ति पैदा हो जाय और इससे सरकार के काम में भी काफी मदद मिले। इतना ही नहीं, इससे लोगों को सरकारी मदद भी आसानी से मिल सकेगी। मुझे पूर्ण आशा है कि सौराष्ट्र में इस काम की पूर्ति हो सकती है।

आत्मविश्वास और विचार-निष्ठा चाहिए

कल से मैं हालार जिले में जाऊँगा। यहाँ पहुँचने में मुझे सात वर्ष लगे। आश्चर्य होता है कि शंकराचार्य बत्तीस वर्ष की अवस्था में तीन बार सारे भारत की यात्रा कर आये। चारों कोनों में उन्होंने चार शांकर मठ स्थापित किये और उनका उत्तरदायित्व शिष्यों को सौंपा। उन्हें आत्मज्ञान पर कितना अधिक विश्वास और कितनी निष्ठा थी। उस जमाने में यातायात आदि के कोई साधन न थे, फिर भी उन्होंने इतनी लम्बी यात्राएँ तीन-तीन बार कीं। ज्ञान और शिक्षा के प्रति उनकी निष्ठा का यह ज्वलन्त उदाहरण है। आज इतने वर्ष हो गये, फिर भी देश पर उनका असर मौजूद है। यह देखकर मेरे ध्यान में आता है कि ऊपर-ऊपर के प्रचार से काम नहीं हो सकता। प्रचारकों के हृदय में आत्मविश्वास होना चाहिए। यह काम ऐसे ही प्रचारकों का आधार चाहता है। चरित्रपरायण, सत्यनिष्ठ और नीतिमान् प्रचारक एक ही हो तो भी काम चल सकता है। आदमी निष्ठावान् होकर काम करे, तभी असर होता है।

जैसे पुराने जमाने में भक्तिमान सन्त होते थे और उनका स्पर्श सभी लोगों को होता था, वैसे ही कार्यकर्ता भी भक्तिमान, प्रेमी, विश्वासी और ज्ञानी हो तो एक से अनेक कार्यकर्ता उसी तरह निर्माण होंगे, जिस तरह एक दीये से दूसरा दीया जल उठता है। इसमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं। इसी श्रद्धा से मेरी यात्रा चल रही है। भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि वे आप सबको ऐसी ही प्रेरणा दें। ० ० ०

गुजरात विद्यापीठ के कार्यकर्ताओं के बीच — अहमदाबाद (गुजरात) २१-१२-'५८

छात्रों के दो व्रत—कसा शरीर और आस्वाद की साधना

[अहमदाबाद से साबरमती जाते हुए रास्ते में विद्यापीठ के शिक्षक तथा विद्यार्थी भाई-बहनों के साथ]

अभी मगनभाई का पत्र पढ़ा गया। उन्होंने मेरे बारे में लिखा है कि मैं इस बात का साक्षी रहा हूँ कि विद्यापीठ की स्थापना किस तरह हुई। शायद आप न जानते हों, विद्यापीठ के आरम्भ में थोड़ा-बहुत पढ़ाने का काम मैंने किया है। उन दिनों साबरमती-आश्रम में मैं रहता था और प्रतिदिन यहाँ आकर पढ़ाता था। समय बचाने के लिए आते समय चलकर आता और लौटते समय दौड़कर जाता था। ४५ मिनट का एक घण्टा मैं पढ़ाता था। साबरमती-आश्रम में भी गीता पर मेरे वर्ग चलते थे। वे वर्ग सुबह चलते और उनमें ५-७ लड़के रहते थे। तीन बजे दोपहर को एक वर्ग लिया करता था और शाम को प्रार्थना में भी बोलता था। दोपहर के गीता के वर्ग में कुछ विद्यार्थियों को दौड़कर आना पड़ता था, क्योंकि समय थोड़ा रहता था। इस तरह आरम्भ में कुछ कसा हुआ जीवन था। अब संस्था धीरे-धीरे विकसित होती जा रही है, साथ ही साथ उसमें कुछ सुविधाएँ भी बढ़ रही हैं। विद्यार्थी-जीवन में उत्तम खुराक मिलनी चाहिए, क्योंकि विद्यार्थियों का बढ़ता हुआ शरीर होता है। उनकी खुराक में कमी नहीं रहनी चाहिए। लड़कों को ये सारी सुविधाएँ मिलनी ही चाहिए। फिर भी सुविधाजनक जीवन की आदतें यदि जीवन में स्थायी रूप ले लें तो उससे अधिक पुरुषार्थ नहीं कर पायेंगे और देहातों में जाकर काम भी नहीं कर सकेंगे। व्यास भगवान ने तो महाभारत में लिख दिया है कि 'सुखार्थिनः कुतो विद्या, कुतो विद्यार्थिनः सुखम्' यानी सुखार्थियों को विद्या कहाँ और विद्यार्थियों को सुख कहाँ? इस तरह सुखार्थी और विद्यार्थी, ऐसे दो भाग समाज के हो गये, जब कि विद्यार्थियों को आत्मानन्द, विद्यानन्द, गुरु-सेवा और ऐसे बहुत से सुख होते हैं। लेकिन सुख का प्रचलित अर्थ है सुविधाएँ। ये सुविधाएँ उन्हें नहीं मिल सकतीं और यदि वे शारीरिक सुख चाहते हैं तो विद्या उन्हें नहीं मिल सकती। मेरा शरीर तो पहले से ही कमजोर था। मैंने यदि शरीर को कसा न होता; सर्दी, गर्मी, बरसात, आँधी आदि सहन करने की शक्ति प्राप्त न की होती तो मैं इस भूदान में नहीं टिकता। सात-आठ साल से यह यात्रा चलती आ रही है और कौन जाने कब तक चलेगी! वर्षा, गर्मी, सर्दी सहनी पड़ती है। कभी-कभी तो जहाँ अधिक-से-अधिक वर्षा होती है, वहाँ भी सतत चलता रहा। जैसे केरल में १७५ इंच पानी बरसता है। यहाँ अहमदाबाद में तो ३० से ४० इंच ही वर्षा होती है। इसपर से आपको खयाल आयेगा कि १७५ इंच पानी किसे कहते हैं? चार साल पहले जहाँ सबसे अधिक सर्दी पड़ती है, वहाँ मेरी यात्रा चलती थी। गर्मियों में बाँदा और नलगुंडा जैसे जिले में, जहाँ ११८-११९ डिग्री तापमान होता है, मेरी यात्रा चलती रही।

हमारी यात्रा जान-बूझकर इस तरह योजित होती हो, ऐसा नहीं है, पर ऐसा करना पड़ जाता है। फिर भी शरीर साथ दे

रहा है, क्योंकि ऐसे जीवन की आदत बचपन से डाली गयी है, वह काम आ रही है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप सबके शरीर मजबूत बनें। वे मेरे शरीर की तरह कमजोर न हों, बल्कि कसे हुए हों। खाने-पीने में उत्तम खुराक हो तो शरीर बढ़ेगा, लेकिन बीच-बीच में उपवास करते रहना चाहिए। हमारे पूर्वजों ने इसी-लिए बीच-बीच में उपवास की योजना रखी थी। प्रकृति हमारी मित्र है। खूब पानी गिरे तो मानना चाहिए कि हमारा मित्र हमें मिलने आया है। कड़ाके की धूप हो तो भी ऐसा ही मानना चाहिए। धूप से मिट्टी गरम होगी और उस पर पानी पड़ेगा तो फसल पैदा होगी। धरती को धूप न लगे तो केवल पानी से फसल नहीं होगी। उसी तरह अपना शरीर भी मिट्टी है, उसे सूर्य-नारायण का स्पर्श होना चाहिए। ये सब हमारे मित्र हैं और मित्ररूप में ही हमें उनका स्वागत करना चाहिए।

कसा हुआ जीवन ही मधुर जीवन है। जीवन में माधुर्य कायम रह सके, इस तरह का जीवन बनाना चाहिए। विद्याभ्यास के समय ऐसी तन्मयता होनी चाहिए कि रसना को क्या खा रहे हैं, इसका पता ही न लगे। मेरी माँ रसोई करते हुए कुछ-न-कुछ गाथा करती थी। उसे बहुत-से भजन कंठस्थ थे। एक ओर रसोई करती रहती, दूसरी ओर स्तोत्र-पाठ जारी रहता। इससे कभी नमक डाला गया है या नहीं, यह भी भूल जाती। इस कारण कभी कभी नमक दुगुना भी हो जाता था। उसे कुछ अधिक नमक खाने की भी आदत थी। मैं सबसे पहले भोजन करके कॉलेज चला जाता था। मुझे तो पता ही नहीं चलता था कि भोजन में नमक ज्यादा है या कम। नतीजा यह होता कि जब पिताजी भोजन करते तो कहते कि अरे, इसमें तो अधिक नमक है। तब माँ कहती कि भूल से गिर गया होगा। रसोई पहले से चख ले, यह तो उसके लिए सम्भव था नहीं और भजन में उसे याद रहता नहीं। जब वह खाने बैठती तो उसे अधिक नमक खाने की आदत थी ही तो उसे लगता कि बहुत तो नहीं है। लेकिन मेरे कॉलेज से लौटने पर कहती कि "क्यों रे विन्या, सुबह नमक ज्यादा था तो भी तैने नहीं बताया।" तब मैं कहता कि "मुझे कुछ खास याद नहीं है।" इस तरह से अध्ययन में तन्मयता होनी चाहिए। विद्यार्थी को अस्वाद-व्रत व्रत के रूप में नहीं, सहज ही साध्य होना चाहिए। यह तन्मयता की कसौटी है। अस्वाद-व्रत और कसा हुआ जीवन विद्यार्थियों के लिए जरूरी हैं। यह आप जीवन में उतारेंगे तो मुझे आशा है कि जिस सेवा के लिए आप तैयार हो रहे हैं, वह सेवा आपके हाथों अवश्य होगी। ● ● ●

बाल-मिलन के अवसर पर

अहमदाबाद (गुजरात) २०-१२-'५८

घर-घर स्थितप्रज्ञ श्लोकों की प्रार्थना हो

[अहमदाबाद नगर में प्रवेश करने के बाद तुरन्त ही अहमदाबाद के बालकों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया था, जिसमें लगभग एक लाख बालकों ने भाग लिया था। इन बालकों ने अत्यन्त व्यवस्थित और सुन्दर ढंग से स्थितप्रज्ञ के श्लोक एवं अन्य प्रार्थना पू० विनोबाजी के समक्ष गाकर सुनायी। प्रार्थना के पश्चात् पू० विनोबाजी ने बच्चों से एक मिनट मौन करवाया। सफल मौन की समाप्ति के बाद उन्होंने बालकों को संबोधित कर कहा :]

यह दृश्य देवों के लिए भी सुदुर्लभ

मेरे प्यारे बच्चो ! आप लोगों को अधिक संख्या में देख मुझे बहुत ही आनन्द हो रहा है। आप सबने भगवान की जो प्रार्थना की, वह दृश्य इतना लुभावना था कि स्वर्गस्थ देवता भी उसे देखने के लिए यहाँ आये होंगे। ऐसा सुन्दर दृश्य देवताओं के लिए भी दुर्लभ हुआ करता है। जहाँ इतने सारे बालक भगवान की भक्ति में मग्न होकर भजन करते हैं, वहाँ सभी देव यह देखने के लिए उत्सुक हुआ ही करते हैं।

देश का उज्ज्वल भविष्य

यह सारा दृश्य देखते हुए अपने देश के उज्ज्वल भविष्य के बारे में विशेष आशा उत्पन्न होती है। जिस देश के बालक इस तरह भक्ति करें और एक-दूसरे पर प्रेम करने की बात सीख लें, उस देश का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। आज मेरे हृदय को जो आनन्द हो रहा है, उसका वर्णन मैं शब्दों में नहीं कर सकता।

स्थितप्रज्ञ-प्रार्थना सार्वधार्मिक

अभी आप सब लोगों ने जो प्रार्थना गायी, वह अब अह-मदाबाद के हर घर में चलनी चाहिए। यह प्रार्थना हिन्दू, मुस-लमान, पारसी, जैन, बौद्ध, ईसाई आदि सभीके लिए चल सकती है। इसमें स्थितप्रज्ञ के लक्षण बतलाये गये हैं। उसका अर्थ यह होता है कि जिस मानव की बुद्धि स्थिर हो, वह अच्छा-से-अच्छा निर्णय कर सकता है। इसलिए प्रत्येक मानव को अपनी बुद्धि स्थिर रखनी चाहिए। यह किस तरह किया जाय, इसका उपाय इन श्लोकों में बताया गया है। यदि सभी लोग यह प्रार्थना करने लगें, तो बहुत अच्छा हो। ● ● ●

अनुक्रम

१. सामाजिक रूप···	पालनपुर	३१ दिसंबर	५७
२. धरती पर स्वर्ग···	पड़घरी	२३ नवंबर	५९
३. ग्रामराज्य में ही···	हडमतिया	२४ नवंबर	६१
४. छात्रों के दो व्रत···	अहमदाबाद	२१ दिसंबर	६३
५. घर-घर स्थितप्रज्ञ···	अहमदाबाद	२० दिसंबर	६४

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।